ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v7.i3.2019.956

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Arts

तुर्रा–कलंगी : मध्यप्रदेश के निमाड़ क्षेत्र का परम्परागत संचार

डॉ. श्रीमती अनुराधा शर्मा [1]

[1] सहायक व्याख्याता, पत्रकारिता एवं जनसंचार, ऑल्टियस इंस्टिट्यूट ऑफ प्रोफेंशनल स्टडीस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

मुख्य शब्द – निमाड़, तुर्रा और कलंगी, लोकमंच

Cite This Article: डॉ. श्रीमती अनुराधा शर्मा. (2019). "तुर्रा–कलंगी : मध्यप्रदेष के निमाड़ क्षेत्र का परम्परागत संचार." *International Journal of Research - Granthaalayah*, 7(3), 158-162. https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v7.i3.2019.956.

सारतत्व

मध्यप्रदेश के निमाड़ क्षेत्र में हिन्दी प्रांतों की तरह मंच अथवा रंगमंच की गतिविधियां वर्तमान में कम ही है। जहां भारत के अन्य प्रांतों में अपनी–अपनी भाषा में रंगमंच की पहचान एवं जागरूकता विद्यमान है वहां हिन्दी प्रांतों में न पहचान है न जागरूकता। ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दी प्रदेशों में लगातार सांस्कृतिक ह्रास हो रहा है। इसके लिये भयानक आर्थिक गिरावट, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार के साथ–साथ विषम सामाजिक स्थितियां जिम्मेदार है। इसके अलावा रेडियो और टेलीविजन के साथ इन्टरनेट का अत्यधिक प्रचार भी जिम्मेदार है।

भूमिका

मध्यप्रदेश के निमाड़ क्षेत्र में तीन प्रकार का रंगमंच विद्यमान है और रहा है। एक लोकमंच, दूसरा नगर का मंच और तीसरा स्कूल–कॉलेजों का रंगमंच। लोकमंच किसी भी देश की सांस्कृतिक चेतना का आधार है, यदि आधार ही नष्ट हो जाता है तो आधेय की स्थिति भी स्वतः ही डावांडोल हो जाती है। निमाड़ के लोकगीत अब मंद होते जा रहे हैं। नये लोकगीतों का सृजन अब होता नहीं है, और जो सृजन हो रहा है वह पारम्परिक स्वरूप में नहीं है, और गांवों में भी लोकगीतों के स्थान पर सिनेमा के गीतों का चलन होने लगा है। अब चौपालें नहीं जुटती। ग्राम पंचायतें जुटती हैं तो इन ग्राम पंचायतों में जो–जो होता है वह एक अलग ही गाथा है। लोक भाषा और लोक संस्कृति के प्रति हमारा कोई लगाव नहीं है। केवल उत्सवों में नमूनों और तमाशे की तरह उसका एक दिखावा मात्र रह गया है। हमने लोक संस्कृति के शव को रंगबिरंगी चादर उढ़ाकर प्रदर्शन के लिये बाजार में खड़ा कर दिया है। हमारे यहां लोक गायक, लोकनृतकों और लोक कथाकारों को कोई दो कौड़ी नहीं पूछता। किन्तु एक सम्मान या पुरस्कार मिल जाने से हमारी व्यवस्था के ठेकेदार उसी के नाम पर करोड़ों रूपये खर्च करके मौज उड़ा लेते हैं।

निमाड़ का लोकमंच सरल और सीधा है। जिसमें ढ़ारा–ढ़ारी, तुर्रा–कलंगी, मायरा और राम दंगल इस प्रदेश के लोक नाट्य रहे हैं। किसी मायने में रामलीला और रासलीला भी यहां मौजूद रहा है जो अब लगभग जन्माष्टमी के आगे–पीछे और शरद पूर्णिमा के अवसर पर मंदिरों में प्रदर्शित किया जाता है, और धीरे–धीरे

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2619476

यह निमाड़ में मात्र झांकियों और कीर्तन तक सिमटकर रह गया है। रामलीला का भी अब कोई स्थाई मंच अब निमाड़ में नहीं बचा। दशहरें के पूर्व नवरात्रि ने ही इस लोकनाट्य को जीवित रखा है। वह भी अब कहीं गरबों के शोर में लुप्त होता जा रहा है। निमाड़ में रामलीला मंडलियों का भी अब अभाव है। मायरा तो अब लुप्त प्रायः है और मायरा कहने वाले लोग भी अब नहीं रहे। रामदंगल, ढ़ारा–ढ़ारी और तुर्रा कलंगी भी अब कुछ नये स्वरूप में उभरकर सामने आ रहा है।

शोध विधि

शोधपत्र के लिए विश्लेश्षणात्मक ,अन्वेषणात्मक शोध विधि का उपयोग किया गया। शोध सामग्री के संकलन के लिए प्राथमिक स्रोतों के रूप में निमाड़ क्षेत्र की यात्रा की गई । विशेषज्ञों, लेखकों, संपादकों मीडियाकर्मियों, के साथ विचार विमर्श कर भी विषय का अध्ययन किया गया। द्वितीयक स्रोतों का लिए विभिन्न पुस्तकें, शोध सामग्री ,इन्टरनेट, का अध्ययन कर उनका उपयोग किया गया।

समता एवं एकता का संगम

लोकानुभूमि युग के अनुरूप अभिव्यक्ति का सजह स्वरूप धारण करती रही है। विश्व में अनेक राष्ट्रों में संक्रमण कालीन स्थितियां निर्मित हुई, उस कुहासे को भेदकर लोकमानव को सहज, सरल मार्ग दिखाने वाले महापुरूष भी लोक ने सदैव प्रदान किये। शंकर के अद्वैत और गोरख के जोग को पूर्णतः समझने में विवश सामान्य लोक मानस को भक्ति के अनेक स्रोतों में शांति प्रतीत होती है। तुर्रा–कलंगी अखाड़ों द्वारा जन मानस में एकता, समता के संगम को लहराने लगा था।

आज से लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व मिर्जापुर के श्री तुखनगिरी गुसाई और मुरादाबाद के श्री शाह अली फकीर ने लोक में समता, एकता और पारस्परिक सौहार्द के लिये 'तुर्रा' और 'कलंगी' अखाड़ों की स्थापना की। तुखनगिरी का दल तुर्रा और शाह अली का दल कलंगी कहलाया। भ्रम और माया, पुरूष और प्रकृति, शिव और शक्ति की परस्पर श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए राम और कृष्ण की लीलाओं तथा पौराणिक, ऐतिहासिक गाथाओं एवं सम–सामयिक समस्याओं का समावेश भी इनके गायन में रहा। तुखनगिरी ब्रम्हा की और शाह अली माया की श्रेष्ठता सिद्ध करते रहे। बाहरी रूप से एक दूसरे से भिन्न प्रतीत होने वाले इस काव्य संगीत के द्वंदों में आंतरिक एकता हमेशा ही समाहित रही। यह तुर्रा– कलंगी अखाड़ों की विशेषता है। तुर्रा कलंगी दलों की मान्यता एवं जनश्रुति अनुसार किसी पेशवा द्वारा दरबार में श्रेष्ठ प्रदर्शन करने पर तुखनगिरी को रत्न जड़ित तुर्रा और शाह अली को हीरक जड़ित कलंगी प्रदान कर पुरस्कृत किया गया। यहीं से तुखनगिरी का अखाड़ा तुर्रा और शाह अली का दल कलंगी कहलाने लगे। उस समय तुर्रा का झंडा भगवा और कलंगी का हरा हुआ करता था। लावणी की श्रृंगार धारा को भक्ति की ओर तथा सूफ़ी (प्रेम) की ओर अभिमुख कराने का श्रेय तुखनगिरी और शाहअली को है । बाद में इनके शिष्यों ने सम्पूर्ण देश में अनेक स्थानों पर अपने अखाड़े स्थापित किए ।

सामान्य रूप से तुर्रा और कलंगी दलों के सदस्य अपने–अपने सिद्धांतों का लोकमंच पर प्रदर्शन करते हैं, शास्त्रार्थ होता है । प्रमुख वाद्य चंग (डफ, ढफली) होता है। दल के सदस्य आमने–सामने बैठते हैं। प्रथम श्रीगणेश वंदना प्रस्तुत की जाती है, उसके उपरांत तुर्रा दल के सदस्य अपने गुरू या उस्ताद की अनुमति से कोई ख्याल या लावणी गा कर प्रस्तुत करते हैं। उसमें कोई प्रश्न निहित रहता है, एक दल का गायन (ख्याल या पद) समाप्त होने पर दूसरा दल कलंगी जवाबी ख्याल प्रस्तुत करता है। ख्याल की विषय वस्तु, छंद, गेय पद्धति (रंगत या लोकधुन) भावभूमि में समानता रहती है। इस प्रकार परस्पर यह काव्य (गेय) प्रतिस्पर्धा घंटों तक चलती रहती है। कोई भी दल पराजित होना स्वीकार नहीं करता है।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2619476

सदियों से गुरू शिष्य परम्परा के माध्यम से बही चोपड़ें तैयार होते थे । गाते समय दोनो दल बही चोपड़ें खेालकर बैठते थे । एक दल जब ख्याल या पद के माध्यम से प्रश्न करते तो दूसरे दल के कलाकार बही चोपडें में उत्तर ढूंढते और निमाड़ी में गाकर उत्तर देते । बही चोपड़ों में उस स्थान का इतिहास, निमाड़ की संस्कृति, महाभारत और रामायण के साथ भर्त्रहरी के प्रसंगों का भी निमाड़ी में बखान होता । प्रत्येक विषय के अलग अलग चोपड़ें होते थे । कभी कभी सटिक उत्तर ना ढूंढ पाने पर तुरन्त जवाब तैयार किया जाता ,जो दल के आशुकवि तैयार करते । इस तरह नई समस्याएं, घटनाएं और कथानकों के आधार पर नव काव्य सृजन चलता रहता । हांलाकि तात्कालिकता मे वो गम्भीर जवाब नही मिल पाता था जो चोपड़ों में विचार के साथ लिखे जाते थे । इन गम्मतों में संगीत, काव्य रंचना की प्रस्तुति और 'टेक झेलने' की कला भी दल के कलाकारों में होती है जो आखिर लाइन को पुनः दोहराते थे ।

तुर्रा कलंगी अखाड़ों के इस काव्य द्वंद को तीन सौ वर्ष हो चुके हैं। फिर भी कोई दल अभी तक अपनी पूर्ण पराजय स्वीकार नहीं कर सका है। तुर्रा–कलंकी लोकानुरंग वैसे तो आध्यात्म विषयक काव्य गायन की प्रतिस्पर्धा मूलक शैली है। जिसमें तुर्रा वाले अपने को शिवजी का अनुयायी और कलंगी वाले शक्ति का उपासक मानते हैं। जिसके फलरूप ब्रम्हा और माया की सर्वोपरी सत्ता आज तक अनुत्तरित बनी हुई है। यही तुर्रा–कलंगी दलों की लोक प्रियता का मूल आधार है।

तुर्रा कलंगी सम्प्रदाय की विशेषता उनका सर्वधर्म सम्भाव है। दोनों दलों के सदस्य कई जाति के होते हैं और कार्यक्रम के अंत में भी दोनों दलों के सदस्य आपस में प्रेमभाव से मिलते हैं और न कोई जातपात का भेदभाव और न कोई ऊंच–नीच का। वस्तुतः यह मानव हृदय की उच्च स्थिति है। इसे ब्रम्हानंद की संज्ञा दी जा सकती है। जहां मनुष्य जाति, धर्म, देश और काल से परे उस दिव्य भाव भूमि पर आसीन होता है, जिसे प्राप्त करना समस्त धर्मो, साहित्य और संस्कृति का लक्ष्य रहा है। तुर्रा– कलंगी की भाषा इसलिये भी सहज मानव की लोकभाषा है और गायकी में भी लोकधुनों का ही प्रयोग होता है।

तुर्रा–कलंगी में साम्प्रदायिकता अथवा किसी अन्य संकीर्णता को कोई स्थान नहीं दिया गया है। धर्म निरपेक्षता, सर्वधर्म सम्भाव ही इसका मूल उद्देश्य रहा है। हिन्दू 'परमज्योति' के रूप में परमात्मा की जिस छवि के दर्शन करते हैं मुसलमान उसी सत्ता को 'नूर' के रूप में मानते हैं। उनके ये भाव इस रूप में प्रकट हुए हैं–

वो ही हिन्दू, वो ही मुसलमां।
वो ही यहूदी वो ही सिमर है।।
वो ही मालिक तेरा हमारा।
उसका तुम भी रखो सहारा।।

राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता की दृढ़ भावना इन अखड़ो के मान्य आदर्श थे । तुर्रा–कलंगी दलों के गायक सिर्फ मानवता वादी दृष्टिकोण के प्रचारक और समर्थक थे। वे समन्वयवाद के पोषक, धर्मनिरपेक्षता के प्रतीक और नैतिकता के प्रवर्तक थे। परमात्मा तो सर्प व्यापक है और प्रेम ही उसका प्रकाशक है । पवित्र प्रेम की धारा दृष्टव्य है –

न वहां शिवाला, न वहां मसजिद, न गिरजाघर, न है द्वारा ।
न हिन्दु मुस्लिम सिख इसाई, इसां वहां पै प्यारा ।।

अभेद दृष्टि ही सम्पूर्ण जगत में प्रभु का दर्शन कराने में समर्थ है, तभी तो तुर्रा गायक कहता है–

बिना तेरे कोई फूल न देखा, खाली कुल फूलवारी में।
भंवर दृष्टि हो तमाम देखा, हमने बाग बहारी में ।।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2619476

कलंगी गायक प्रेम की महिमा बताता और कहता यह प्रेमरूप परमात्मा सर्वत्र है –

वो ही ब्रह् वो ही शंकर, वो ही विष्णु कहलाता ।
निरंकार है वही फिर, अपना रूप दिखाता ।।

भारतीय संस्कृति के पर्वो और त्यौहारों जैसे गणगौर, दशहरा शरद पूर्णिमा के समय गांव के चौक चैराहों के बीच मंच बनाये जाते । तुर्रा कलंगी के मंच दोनों ओर होते , जो बड़ा तखत लगाकर बनाये जाते, जनता बीच में बैठती थी। जो लोक नाट्य के प्रश्नों में बंधी रहती । शुरूआत गणेश वन्दना से होती ,उसके बाद दूसरा दल सरस्वती वन्दना प्रस्तुत करता और उसके बाद गायन परम्परा के सवाल–जवाब का सिलसिला आधी रात तक चलता । इस लोकसंगीत का स्वरूप कव्वाली या वाद–विवाद की प्रतियोगिता के जैसा होता था ।

वर्तमान स्वरूप

आज भी प्रस्तुति में पहले गणेश आराधना होती है। आजकल निमाड़ में आमने–सामने की प्रस्तुति देने के बजाय एक के बाद एक प्रस्तुति देने का रिवाज भी हो गया है। श्रोता तालियों की लय के साथ गीत का आनंद उठाते हैं।वर्तमान में तुर्रा पार्टी के सदस्यों में सुमन लाल राव (ग्राम गोगांवां) शिवराम कुशवाह और कलंगी पार्टी के सदस्यों में रामलाल सोलंकी, यशवंत यादव ,भागीरथ चौहान इस समय निमाड़ में अपनी प्रस्तुतियां दे रहें हैं। आज–कल राजनैतिक मुद्दों और भ्रष्टाचार जैसे मुद्दों पर भी प्रस्तुति होने लगी है।

शास्त्रार्थ के साथ हास–परिहास और व्यंग्य को भी शामिल किया जाने लगा है। इसके साथ सुमन सुमेरसिंह, दयाल यादव सताजना गवल के श्याम पाटिल, ललित डांगर, शीतल कुमार इस विद्या के महत्वपूर्ण कलाकार हैं।

निमाड़ की इस पारम्परिक विद्या तुर्रा–कलंगी की प्रस्तुति पर श्रोता झूम उठते हैं ,जब निमाड़ी बोली में राजनेताओं पर प्रसंग छिड़ते हैं और जमकर प्रहार होते हैं। कभी–कभी श्रोताओं की मांग पर भी कार्यक्रम आगे बढ़ता रहता है। दोनों अखाड़ों या दलों के बीच होने वाले पद्ध–बद्ध संवादों से काव्य गायन अब भी रात–रात भर चलते रहते हैं। जिनमें देवी–देवताओं की स्तुति, अपने गुरू और खलीफाओं का गुणगान, सवाल–जवाब के रूप में सुनने को मिलता है। निमाड़ के साथ–साथ तुर्रा–कलंगी दल के कुछ सदस्य अब अन्य स्थानों में भी प्रदर्शन करने लगे हैं। छोटी जगहों पर भी अच्छी जनता जुटती है और प्रदर्शन के लिये तुर्रा–कलंगी के अखाड़े भी जमकर तैयारी करते हैं। विभिन्न मेलों ओर उत्सवों के समय तुर्रा–कलंगी का आयोजन होता है ,कहीं कहीं इन आयोजनों को लोग गम्मत भी कहते हैं।

निष्कर्ष

पहले लगता था की घर आंगन की बोलियां अपने ही परिवेश में पराया होने का दर्द झेल रही है। किन्तु अब इस दिशा में लोक भाषा और संस्कृति प्रेमियों के प्रयास अपना असर दिखा रहे हैं और ये प्रस्तुतियां मीडिया में भी स्थान पाने लगी है। समाचार पत्रों के अलावा रेडियो–टीवी के साथ–साथ इंटरनेट पर भी इनकी प्रस्तुतियां उपलब्ध हैं।
किन्तु चिन्ता का विषय ये है कि अब न बही चोपड़ें बचे है और न इस विधा के नए कलाकार तैयार हो रहे है । आवश्यकता है लोक मानस को तुर्रा–कलंगी की स्नेहिल, प्रेमिल, लोक मंदाकिनी में आह्वान कराने की, जिससे समूचा लोक आनांदित हो सके।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.2619476

संदर्भ

[1] पद्श्री रामनारायण उपाध्याय : निमाड़ का सांस्कृतिक अध्ययन, लोक साहित्य ।
[2] वसन्त निरगुणे, बिखरे रंग निमाड़ के 1976
[3] वसन्त निरगुणे, लोक सस्कृंति
[4] ओंकार मांधाता स्मारिका
[5] लोक सस्कृंति सम्मान अभिनन्दन स्मारिका, निमाड़ लोक सस्कृंति न्यास खण्डवा
[6] प्रोफेसर शैलेन्द्र कुमार शर्मा : मालवा का लोक नाट्य माच और अन्य विद्याए, अंकुर मंच, उज्जैन प्रथम संस्करण, 2008
[7] शर्मा शैलेन्द्र कुमार : मालवी भाषा और साहित्य मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, 2010
[8] मालव विशेषांक।
[9] सदाशिव कौतुक, निमाड़ साहित्य।

इंटरनेट वेबसाइट सूची

[1] http//wikipedia.org/wiki.
[2] http//hindimedia .org
[3] http//hi.m.wikipedia.org/wiki.